

I'll give you a stupid example.



Imagine if you were capable of
an intelligent one.

एक जिलेट मिसाल

दूरी, भेस और उस औरत के बारे में जो ऑडिट करती है।

मिसाल के तौर पर,

संवाद हमेशा एक ख़ास नुस्खे के सहारे चला है।

मिसाल के तौर पर।

चार मासूम शब्द।

चार शब्द जो देखने में निरीह और शालीन लगते हैं, मगर जिनमें एक असाधारण खूबी है: वे इंसान को इजाज़त माँगे बिना किसी और के इलाक़े में दाख़िल होने देते हैं।

जब कोई कहता है मिसाल के तौर पर, तो मक़सद शायद ही कभी ख़ुद मिसाल होता है।

मक़सद है दूरी।

क्योंकि लोगों को यह अच्छा नहीं लगता कि वे ख़ुद किसी समस्या के सामने बेपर्दा नज़र आएँ। उन्हें अच्छा नहीं लगता कि उनका अपना नाम किसी कमज़ोरी, किसी ग़लती या किसी विरोधाभास के साथ जोड़ा जाए।

मगर वही चीज़ें जब किसी और की हों, तो उन्हें देखने को वे पूरी तरह तैयार रहते हैं।

और इस तरह संवाद ने एक कमाल का छोटा रास्ता ईजाद किया।

यह मत कहिए:

“तुम ऐसा कर रहे हो।”

यह कहिए:

“मिसाल के तौर पर, एक आदमी की कल्पना करो जो...”

और फ़ौरन सारे बचाव गिर जाते हैं।

सुनने वाला कहानी के साथ चल पड़ता है।

किरदार को परखता है।

हालात पर फ़ैसला सुनाता है।

शायद हँस भी देता है।

समझ बाद में ही आती है।

किरदार कभी कोई और था ही नहीं।

किरदार सुनने वाला खुद था।

मिसाल बस एक भेस थी, जो हकीकत ने धर रखा था।

बात कहने के सबसे बड़े उस्ताद यह हमेशा से जानते रहे हैं।

विचार शायद ही कभी सामने के दरवाज़े से दाखिल होते हैं।

उन्हें बगल के दरवाज़े ज़्यादा पसंद हैं।

मिसाल के तौर पर,

इंसानी रिश्ते हमेशा मिसालों पर टिके रहे हैं। खासकर मर्दों और औरतों के बीच।

मर्द सदियों से इनका इस्तेमाल करते आए हैं।

मिसाल के तौर पर, सोचो कि हम समंदर किनारे रहते।

मिसाल के तौर पर, सोचो कि हम पाँच साल पहले मिले होते।

मिसाल के तौर पर, सोचो कि हम न्यूयॉर्क चले जाते।

मिसाल के तौर पर, सोचो कि हम एक-दूसरे के होते।

इनमें से कोई भी बात हकीकत बयान नहीं करती।

ये वास्तुकला बयान करती हैं।

शब्दों से खड़े किए गए अस्थायी ढाँचे।

ऐसे कमरे जहाँ संभावना को सबूत के पहुँचने से पहले भीतर आने दिया जाता है।

मर्दों को ये कमरे बहुत पसंद हैं।

क्योंकि कल्पना निर्माण से सस्ती पड़ती है।

कल्पना के भीतर हर मंसूबा चल निकलता है।

हर सफ़र कामयाब होता है।

हर औरत समझती है।

हर नतीजा हक़ में आता है।

फिर, देर-सबेर, हकीकत आ पहुँचती है।

और हकीकत अक्सर एक औरत की शक्ल में आती है।

एक समझदार औरत सुनती है।

एक बहुत समझदार औरत आँकती है।

एक आला दर्जे की औरत ऑडिट करती है।

और फ़र्क़ अच्छा-खासा है।

एक मामूली बातचीत आँके जाने के बाद भी बच सकती है।

एक मंसूबा आलोचना के बाद भी बच सकता है।

एक भ्रम ऑडिट के बाद कभी नहीं बचता।

आम तौर पर ठीक यही वह घड़ी होती है जब एक समझदार मर्द को पता चलता है कि वह भविष्य बना रहा था या महज़ एक ख़याल को सजा रहा था।

जवाब जल्दी आ जाता है।

औरतें लगभग हमेशा सेकंड के हिसाब से दाम लेती हैं।

घंटे के हिसाब से कभी नहीं।

मिसाल के तौर पर,

कल्पना कीजिए एक आदमी की, जिसने बरसों स्पष्टीकरण गढ़ने में लगा दिए। रणनीतियाँ।

परिदृश्य।

मॉडल।

वास्तुकला।

पूरी की पूरी प्रणालियाँ इसीलिए रची जाती हैं कि हकीकत वाजिब दिखे।

फिर एक दिन उसका सामना एक ऐसी औरत से होता है जिसकी समझ उसकी बनाई प्रणाली के नाप से बड़ी निकलती है।

नाटकीय ढंग से नहीं।

आक्रामक ढंग से नहीं।

बस सहज ढंग से।

वह सुनती है।

देखती है।
इंतज़ार करती है।
फिर एक सवाल पूछती है।
एक सीधा-सा सवाल।
उस क्रिस्म का सवाल जो दस बरस के बौद्धिक निर्माण को दस सेकंड में ढहा देता है।
उस मुक़ाम पर कुछ अनोखा होता है।
आदमी बनाना बंद कर देता है।
योजनाओं का आकर्षण अचानक जाता रहता है।
नक्शे ग़ैरज़रूरी हो जाते हैं।
हिसाब-किताब सजावट बनकर रह जाते हैं।
वास्तुकला ग़ायब हो जाती है।
मंसूबा सीधे रद्दी की टोकरी में जाता है।
इसलिए नहीं कि वह हार गया।
इसलिए नहीं कि उसे ज़लील किया गया।
इसलिए कि आख़िरकार उसे कुछ समझ आ गया।
मिसाल कभी काल्पनिक थी ही नहीं।
मिसाल वह खुद था।
अभ्यास वह खुद था।
केस स्टडी वह खुद था।
और उसके सामने खड़ी औरत उसकी कल्पना में दाख़िल नहीं हुई थी।
वह खुद उस औरत की कल्पना में दाख़िल हुआ था।

फर्दिनांदो